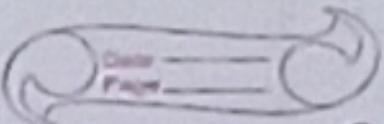


"विहारी का संभोग वर्णन"

रीतिलिखि नहि विहारी शुंगा के रथलिंगे जाए
जैसे शुंगार रथ के दो गोद हैं— रथगोग शुंगार
अंगेर विष्वलक्षण शुंगार। हिन्दी साहित्य ने इसी रथभौम
को संभोग तथा विष्वलक्षण के विभोग शुंगार के नाम
के बजाए गए हैं। रीतिकालीन कलिओं के शुंगार वर्णन
के आठ हो रीतिकाल के विष्ववाचप्रसाद मिथि ने
शुंगारकाल कहा है। वहाँ काल के कलिओं ने
संभोग शुंगार का वर्णन करते हुए विभिन्न कीढ़ा
बायाठें, काल-बेटाओं, अच्छेलेसों, बति-बेलियों,
नाशिका का लप-सोन्वट-चिका, नाशिका भोद, दुत-दुत
सुडेवा उष्णवा, हाल-पठिलाल, कपा-डेलियों जैसे— जल-चिका,
लन-विहार, अपल जे चारखिनी-बोली, फाल चेलना,
घर्तिंगवाली, कुरुतरपाली आदि जा वर्णन किया है।
विहारी ने इन सभी वर्णनों जे तो बनाल दी चुरीक
हैं। विहारी के दोहों जे संभोग शुंगार की विभिन्न
त्रिपुराओं, बेटाओं, वापारों, मनोहरियों, हाल-भालों
आदि का कहा ही सर्वीन तो गर्गोल वर्णन
मिलता है। पे सनस्त वाला व्याघर और वाला
बेलियां दो नगों जे विभिन्न हैं— हाथ हात शुंगार।
सनस्त-व्याघर को 'हात' हाँ सहज हैं शाशांकि
बेलियां जे 'शुंगार' कहते हैं। 'हात' का
विभिन्न विभान दोहों जे दुर्देवा हैं—

"बनस लाला लाल की गुरली बरी लुगद ।
सोहू रहे औंतु हैरे, देन नहे नहि जाद ॥"
गहों पर सोहू जला, औरों में हँसना, देने के लिए

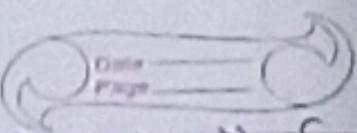


कहना, न ह जाना काहि रखी याक बाहर दिलो
विशेष उद्देश से - गोठावांड कुछ है। लातीलाप के
लालम में चाचा ने कुछ भी युरली छिपाने रखा दी
है। उस कुछ युरली डोंगरे है, तो न ह खोजना।
खाना रखने की है कि मैंने युरले युरली नहीं ली,
किन्तु कुछ समझ जाए है उस युरली छाँटी बास है
उसकी रखा अपनी डोंगरे गोंधी चुनता रो
युरली है।

नायिका के स्वर से यादाहिक लापा। समाज
अतुकाम का उर्ध्वांशु कीर्ति सजीव हो सारथ रख गे मिला
है, जिसों नायिका के लाक ना राखी होते।
उसके ब्रह्म वारीर पसीना से नर-कर हो जाता है सो
रोमांच का अनुभव होने लगता है।

“नरेक-सहित रोमांच-इरु-गारी दुनिया अक नाहा।
हिंगे दिगो योग दाप ते हपलेवा दी राप॥”
शीघ्रोऽगल ली देसी बोके रियति नहीं है, उस पर
विहारी ली चपर-त गाना हो। विहारी द्वा-रोन्दर्दा की
गता ‘आगंगाम’ गाने हैं। बहुतगत नहीं पह ते देखने
गाने की कुछिटे हैं जो उसी-जिन लो दुन्दर लाए
देली हैं। प्रेम में बहलो कुछिटे रख पर पहनी है। विहारी
लप-नर्णन हो आद्युत सकानन्द पाई है। ललाश पर
चिन्दी लडाने वा कुटिल बुजराने वालों के मुख पर आ
जाने से युख अद्वितीय लोन्दर्दा रो मुखोद्धिर हे
जाता है, गदाधरण उड़ान्हा है।

“नहत सबै केहो दिगो जास दस्युनो होत।
तिय लिलार बेंदी दिगो, अठानित बहुत उदोत॥”
विहारी ना मानता है उसे-र्दर्द की दृष्टान्ती



प्रतिपाल परिवर्तित होते रहती है, गरी सोनपरी भी नवीनता है और इसी कारण वह कहीं पुराणा नहीं होता। नायिका ने सोनपरी का विषय लें तो विषयकारों कहने का प्रयास किया है, परन्तु तरलीर बनने के बाद उसे लुप्त कर दिया जाता है।

“सियन ने भी जाही रातों जाहीं-गहीं गरब गरब ।
मान केते जाते ने चुर विन्दे कुर ॥”

विहारी ने सोनपोग वृंगार के अन्तर्गत नायिकाओं के अधिकार का बड़ा दी गया मोहन वर्णन किया है—

“जुतति जोन्हु गे किली गई नैकु न होति लखार ।
जैमें के बुरें, लाडी जाली चली रांग जाइ ॥”

महां पर और वर्णों नी नायिका नौदनी जों ऐसी किल गई है कि अधिकार को जाली हुई वह किली जो भी दिखाई नहीं आती। उसके साथ एक रथी उसनी सची कैलल उसे शरीर के युगल के राहारे बंल ददी है। ऐसे दी बुद्धाभिषिक्तिका के अधिकार का वर्णन कहते हुए अधिकार के बाद लौटो पर राहते गे अन्तिमा के निकल उगते रे उपन उसकी वत्तराबहू, दिवने की दुश्यालता, ऐग-बत्तणता, बाजातुरता उगड़ी नहीं जहा।

सोनपोग विषय निहारी ने किया है—

“अरी खबी सरपट परी किछु बाहें नग होरि ।
शंग लडो मधुपनि लई आग्नु गाली ऊँचोरि॥”

विहारी ने सोनपोग वृंगार का वर्णन कहते हुए रति-झिहा का बड़ा बासोहीपड़ जान, किया है, जो नायिका वापने प्राप्ता कुमारांग के अवसर पर उनके लोगों से छोड़ती हुई, उस से निषेध

(नवाती) दुर्दि, किन्तु औंगों में लिलन की इच्छा प्रकट करती दुर्दि राया जी-नवाती गे साथ नामन, तीव्र द्वेर खिंचती राती आती है—

“जोहु जाहति दुर्दि बाहति, औंगिन शों लपदाति ।

केंद्रि दुर्दि बाहति कर तसवि, आओ आहति जाति ॥”

यही नहीं विद्याति ने तो दरि में—गङ्क, तमङ्क, हौसी, चिसङ्क, भासङ्क, झपट, लपहामि आकि किंगाड़ों को इति मुनित जैही परमानन्ददाहिनी लगाते हैं, उसके सम्मुख अन्य मुनिताँ नाम हैं—

“नगङ्क, नगङ्क, हौसी, सहसङ्क, महङ्क, द्वपट, लपदानि ।

इ तिहि इति रो इति युक्ति और दुर्दि बाति जाति ॥”

नापिका के नेत्रों का लर्णन बरते दुर्दि बिहारी बहते हैं नापिका के नेष्ट अँगार रथ ने स्नान किये दुर्दि हैं, उनमें से अँगार रथ द्वपट रहा है। ते नेष्ट अपनी साधाविन, बालिमा रो रेहे रहते हैं कि लिना काजान लगाए दुर्दि भी रो खेजन पक्षी को लाभित बाद रहे हैं—

“इ लिंगार मैंजु छिहु कुंजु अँजु देन ।

अँजु रंजु हू लिना खेजन गैजन नैन ॥”

~~प्रकृति~~ इतना ही नहीं इसके उड़कुदम और उठो बहारी लिहारी ने नेत्रों का सोनभूषण दूरते दुर्दि घटा है। तु युवानस्था गे प्राप्ति रामी तकियों के नेष्ट दुनीले रां लूँ-कूँ हो जाते हैं, किन्तु दुष्टि निरपेक्षा लगा तो किसी-किसी गे ठी छेती है—

“आनिगारे कीर्ण दुगनि दिति रा तकरि समान ।

१६ वित्तनि बोरे राष्ट्र तिहि लस बोग सुजान ॥”

बिहारी की मानवता है लूँ, सोनदग, का उत्तर तो चुम है। सोनदग की चार्पीकरा चुम भरी दृष्टि है

४। पदि उन्नरता के कोई ऐसा भी हालि से
नहीं बेखता तो उस रौप्यम् वी सार्वत्रिका पर
सत्तालिमा निशान लग जाता है। अरीर उतना ही
इलोका धारा कहता है जिसना ऐसा आके प्रति
रहता है—

“जदपि सुन्दर, सुधरुपुनि, सुखुमी दीपच देव ।
तज प्रलापु नरै तिरो, भर्त्यै जिरो सनेह ॥”
वस्तुतः विष्णुर्वि इति रहता जा सकता है कि,
लिंगरी ने संयोग वृण्गार के बड़ा दी कागोलीच,
भातोनेचड, तनोरेचड, मनमोरेचड रखे लालनामनकु नार्ति
किए हैं। लिंगरी ने सुन्दरता के देष्टर उत्तमा तर्ति
किए हैं। इस लिए गठ कहना उचित वेगा
कि लिंगरी संयोग वृण्गार करने गे पूर्णरूप से सख्त
हुए हैं।

दोष वार्ता उन्नार

हिन्दी विभाग

ब्रह्मगाह महाविद्यालय, साहाराम, रोहतास